ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
ISSN No.: 2347-2944, RNI TITLED No: UPBIL04292,
RNI REG.No.:UPBIL/2014/66218, SOCI.REG. No. 561/2013-14
Vol.-5, No.-I, PP-124-127, YEAR JUNE 2016

वर्तमान भारत में शिक्षा–शिक्षक एवं शिक्षार्थी के सन्दर्भ में

❑ रागिनी मिश्रा

समकालीन भारतीय समाज अंतर्विरोधों का पिटारा है जिसके कुछ पहलू अत्यन्त पेंचीदा हैं। समकालीन भारतीय समाज परिवर्तन के एक संवेगात्मक उद्वेग से गुजर रहा है तथा दुविधाओं और विडंबनाओं की एक श्रृंखला से मुठभेड़ कर रहा है। ये आहत करते हैं किन्तु ये अपरिहार्य हैं।1 समाज की दुविधाओं और विडंबनाओं को प्रौद्योगिकी और ि ाक्षा के द्वारा पाया जा सकता है। समाज की आव यकताओं से ि ाक्षा की उत्पत्ति होती है। समाज का अस्तित्व व्यक्ति के जीवन से कहीं अधिक लम्बा होता है। समय के अन्तराल में एक व्यक्ति समाप्त हो जाता है किन्तु समाज का अस्तित्व बना रहता है और जन्म द्वारा नए सदस्य इसमें जुड़ जाते हैं। अतः प्रत्येक (हरेक) समाज एक इकाई के रूप में साथ रहने की कोि ा ा करता है और एक जीवन–पद्धति विकसित करता है। अपनी जीवन पद्धति को निरन्तर सुरक्षित रखने के लिए समूह के सदस्य, समूह के रीति–रिवाजों, ज्ञान तथा कौ ाल का प्रि ाक्षण अपने बच्चों को देते हैं। ि ाक्षा यह कार्य सम्पन्न करती है। नए विचारों के विकास तथा बदलते परिवे ा के साथ सामंजस्य बनाए रखने के लिए ि ाक्षा ही प्रि ाक्षित करती है।

'ि ाक्षा' वैि वक मानव समाज के संरचनात्मक प्रकार्यात्मक अथवा पारिस्थितिकी के आधार पर किये गये विभिन्न संस्तरणों (विकसित, विकास ील, अविकसित या एग्रेरिया, ट्रान्जीरिया, इंडस्ट्रिया या रिफ्रक्टेड, प्रिज्मेटिक डिफ्यूज्ड) के बीच एक अंतहीन संवाद है अर्थात यह एक ऐसी निरंतर गति ील प्रक्रिया है जिसके भीतर ि ाक्षा ाास्त्र गति ील होता है। आज के दो तथाकथित महानतम धुरंधर विद्वानों में भुमार किये जाने वाले हावर्ड वि ववविद्यालय के बुद्धिजीवी 'फूकियामा' द्वारा 'इतिहास की मृत्यु' और हरिंग्टन द्वारा 'सभ्यताओं के संघर्ष' की घोषणा किये जाने के बावजूद हम वैि वक ि ाक्षा की अवधारणा और प्रत्यय को सजाने–संवारने में अथक रूप से प्रयासबद्ध हैं, 20वीं भाताब्दी के अन्त में हमें जो अभावों की पूर्ति चुनौती स्वरूप दी है, उन यक्ष प्र नों के समाधान हेतु निजीकरण, उदारीकरण, पेटेन्ट और वै वीकरण के प्रयोगात्मक औजारों का उपयोग कर रहे हैं जिनके भोष आ वस्त और संतुष्ट करने वाले परिणाम आने अभी भोष हैं।

हम एक ऐसे युग में जी रहे हैं जब वि व के क्रम ाः फैलते क्षितिज और संकुचित हो रहे आयतन की परस्पर विरोधी भविष्यवाणी गूंज रही है और बिना किसी अपवाद के मानव मनोविज्ञान पर द्वैधात्मक और परस्पर अन्तर्विरोध स्थिति का दबाव पड़ रहा है हालाँकि ऐसा पहली बार नहीं हुआ है। प्रस्तुत किये जा रहे परस्पर विरोधी दावों को न तो प्रमाणित किया जा सकता है और न ही अप्रमाणित। 21वीं भाताब्दी की इस संक्रणात्मक बेला में जबकि स्वयं 'विकास' पद के खोखलापन और अर्थहीनता की अनुगूँज 1994 में ही ओक्टोवियोपाज द्वारा सुनवायी जा चुकी है। यह लगातार घोषित किया जा रहा है कि समाज का वर्गगत संस्तरण (जातिगत संस्तरण की भाँति ही) अब हमारे वर्तमान की आव यकताओं को पूर्ण करने और प्रगति को सुनियोजित करने में असफल हो गया है। जिसे 1838 में अगस्त कॉम्ट ने बड़ी धूमधाम से अपनी पुस्तक 'सो ाल फिजिक्स में' समाज के विज्ञान 'समाज ाास्त्र' को प्रतिपादित किया था और इसमें स्वयं वि वास कर हमें भी वि वास करने हेतु दिवा स्वप्नवत प्रोत्साहित किया था। नवनिर्माण के इस सूत्र से मोह भंग होने के प चात हम एक ध्रुवीय

❑ भोधार्थिनी, एम0ए0,एम0एड0,पी0–एच0डी0, ि ाक्षा ाास्त्र विभाग, स्वामी विवेकानन्द सुभारती वि ववविद्यालय,मेरठ (उ0प्र0)भारत

अराजकतावाद के चंगुल में फंसते जा रहे हैं जहाँ आत्म निर्णय का अधिकार बीते दिनों की बात बनती जा रही है, जो ि ाक्षा की मूलभूत आव यकता है।

सामाजिक परिवर्तन के दो महत्वपूर्ण पहलू हैं। ि ाक्षा और प्रौद्योगिकी का विकास। सभ्यता के इतिहास में उत्पादन की तकनीक के विकास के साथ–साथ मनुष्य प्रगति करता है। मानव ज्ञान का स–तेजी से विकास होते–होते पूरे वि व में तीव्र गति से प्रसार होने में मुद्रण प्रौद्योगिकी के विकास का उल्लेखनीय योगदान रहा है। इसी प्रकार, विज्ञान और प्रौद्योगिकी के प्रभाव के कारण खाद्यान्न के उत्पादन में भी परिवर्तन हुआ है। फिर भी, प्रौद्योगिकी के कारण व्यापक स्तर पर विध्वंस भी हुआ है। इसी कारण आज उपयुक्त प्रौद्योगिकी का प्र न प्रासंगिक बन गया है। वर्तमान आधुनिक युग में सूचना प्रौद्योगिकी का विकास उस घटना की ओर संकेत करता प्रतीत होता है, जो हमने मानव जाति के विकास में पहले देखी थी। अर्थात तकनीक मनुष्य जाति की कहानी कला के सृजन या कारीगरी या कोई ऐसी वस्तु जो मानव की क्षमता में वृद्धि करती है, कि कहानी के रूप में लिखी जा सकती है। जब मनुष्य किसी नई तकनीक का सृजन करता है तो उसे नई दि ा ग्रहण करनी पड़ती है और मानव संबंधों में उचित परिवर्तन करने पड़ते हैं। इसलिए सामाजिक, व्यावसायिक परिवर्तन के विकास में ि ाक्षा और प्रौद्योगिकी के महत्व को ध्यान में रखना उचित होगा।

किसी भी दे ा की ि ाक्षा व्यवस्था वहाँ के जीवन द र्ान तथा भौगोलिक स्थिति, आर्थिक स्थिति और राजनैतिक स्थिति एवं वर्तमान आव यकताओं की परिचायक होती है। इसलिए किसी दे ा की ि ाक्षा व्यवस्था के अध्ययन से हम उद्दे य को समझने लगते हैं और हमें ज्ञात होता है कि संसार के विभिन्न दे ाों की समस्याओं और आकांक्षाओं के अन्ततोगत्वा पर्याप्त साम्य है, अतएव यह आव यक है कि संसार की विविध ि ाक्षा प्रणालियों का अध्ययन किया जाए। ि ाक्षा ने वास्तवमें, सामान्यतः तीव्र सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया में और संस्कारों परितकार करने में, पा चात्यीकरण, धर्मनिरपेक्षता और राष्ट्रीय जागरण की प्रक्रिया में पर्याप्त योगदान दिया है। ि ाक्षा समाज की आबादी के वि ोष वर्ग की भाान्ति और प्रतिष्ठा में वृद्धि करने में सहायक एक महत्वपूर्ण घटक है। भाहर में नौकरी के क्षेत्र का विस्तार करने के अतिरिक्त, इसने ि ाक्षित समाज में आत्म–सम्मान की भावना जागृत किया है। ि ाक्षा के कारण ि ाक्षित जनता में सांस्कृतिक विविधता कम हुई और उनकी एकरूपता में वृद्धि हुई है। यद्यपि भारतीय समाज के सभी वर्गों की ि ाक्षा के समान अवसर प्राप्त नहीं हुए हैं लेकिन ि ाक्षा ने मूल्यों, प्रवृत्ति, जीवन भौली में परिवर्तन करने और समाज में नए विचारों का विकास करने में सार्थक योगदान किया है।2

यदि ब्रिटि ाकालीन ि ाक्षार्थी तथा वर्तमान ि ाक्षार्थी की वृद्धि संख्या पर नजर डाली जाए तो वह

इतनी हो चुकी है कि वह किसी–किसी दे ा की कुल जनसंख्या से भी अधिक है। संख्या और गुणवत्ता का यह प्र न राष्ट्र के लिए बहुत महत्वपूर्ण है क्योंकि स्वतंत्रता पूर्व ि ाक्षा के उद्दे य भिन्न थे, भारत में भाासकों द्वारा ि ाक्षा के लिए वित्तीय सहायता सीधे उपलब्ध नहीं कराई जाती थी, परन्तु वैयक्तिक संस्थाओं, ट्रस्टों तथा धार्मिक एवं सामाजिक समूहों के विद्यालयों की स्थापना एवं विकास के लिए सराकर का नीतिगत समर्थन प्राप्त था।

पा चात्यीकरण, आधुनिकीकरण की ि ाक्षा के कारण ही सुलभ हो सका है। इसी कारण पुरानी संस्थाओं (सती–प्रथा, बाल–विवाह, जातिगत रूढ़िवादिता आदि) में परिवर्तन आया है और नवीन संस्थाओं (जैसे समाचार–पत्र, निर्वाचन, सिविल सेवा, कानूनी न्यायालय आदि) का विकास हुआ है। पा चात्यीकरण के कारण ही मानव मूल्यों का विकास हुआ है, जिसका अर्थ है जाति, आर्थिक

नई ि ाक्षा नीति (1985) के दस्तावेज 'ि ाक्षा की चुनातियाँ नीतिगत परिदृ य' में इसी आधार पर ि ाक्षा के माध्यम से गुणवत्ता लाने व चरित्र पर वि ोष बल दिया गया है, नीति में सांस्कृतिक आयामों तथा भारतीय समाज के बहु–सामुदायिक स्वरूप पर भी बल दिया गया है, नई ि ाक्षा नीति में यह ध्यान रखा गया है कि औपचारिक ि ाक्षा और दे ा की समृद्धि एवं विविध सांस्कृतिक परम्पराओं के बीच गहरा अन्तराल है, इसमें जोर देकर कहा गया है कि आधुनिकता के नाम पर नयी पीढ़ियों को भारतीय इतिहास और संस्कृति की जड़ों से दूर नहीं किया जा सकता। बहुतपहले रवीन्द्र नाथ टैगोर4 ने ऐसे विचार व्यक्त किये थे कि ''ि ाक्षा का सवोत्कृष्ट उद्दे य हमें इस तथ्य की जानकारी देता है कि सम्पूर्ण ज्ञान और हमारी सभी सामाजिक तथा आध्यात्मिक गतिविधियों के बीच एकता है।''

क्या हम इस लक्ष्य की ओर बढ़ रहे हैं?क्या हमने छात्रों, नागरिकों के व्यक्तित्व निर्माण में ि ाक्षा के स्वरूप और विषय वस्तु पर गम्भीरता से परीक्षण कर लिया है? मरणोपरान्त भारत रत्न से सम्मानित जय प्रका ा नारायन5 ने बहुत पहले 1978 में ही औपचारिक ि ाक्षा की उपलब्धियों से निरा ा होकर कहा था ''दुर्भाग्य से अपने लिए हमने ि ाक्षा की जो औपचारिक पद्धति चुनी है वह व्यक्तित्व विकास और सामाजिक परिवर्तन दोनों ही कार्यों को पूरा करने में विफल रही है यह उच्च और मध्य वर्गों को गलत ि ाक्षा देती है जो इसके प्रमुख लाभार्थी हैं यह उन्हें अपनी ही संस्कृति का दु मन बना रही है क्योंकि इससे वे उपभोक्तावादी औद्योगिक समाज के मूल्यों और जीवन भौलियों को अपनाते जा रहे हैं यह उन्हें परजीवी वर्ग में परिवर्तित कर रही है जिससे अधिकाधिक संख्या में लोग निर्धनता की जकड़ में आते जा रहे हैं।''

ि ाक्षा के प्रत्येक स्तर पर ि ाक्षक की भूमिका महत्वपूर्ण होती है ि ाक्षक की नियुक्ति में निम्न स्तर को अपनाया जाना वर्तमान में चिरपरिचित सा हो गया है। ि ाक्षक छात्र की अक्षमताओं को वर्तमान भूमिका में लज्जाजनक भी नहीं मानते जिसमें उन्हें छात्रों के व्यक्तित्व तथा चरित्र निर्माता की नैतिक जिम्मेदारी निभानी होती है। बल्कि वे अक्षमताओं के प्रति समर्पण कर बैठते हैं, अब अक्सर यह कहा जाता है कि ि ाक्षकों की अध्यापन क्षमता के मानदंड कम होते जा रहे हैं। वे प्रतिदिन छात्रों के साथ समायोजन करने का प्रयास करते जा रहे हैं। इस प्रक्रिया में ज्ञान तथा विद्वता के प्रति चिन्ता के अवसर बढ़ते जा रहे हैं अनुकूल और समायोजन की यह संस्कृति आगे चलकर एक प्रचलित विचार लोकाचार बन जाती है जो ि ाक्षक इस लीक से हटने का प्रयास करता है और जो रचना ीलता के मानदंड बनाये रखने के लिए संघर्ष करता है। उसे नीचा समझा जाता है या वह सामान्यतः उन ि ाक्षकों द्वारा अलग–थलग कर दिया जाता है जो इस समायोजन संस्कृति की मुख्यधारा का निर्माण करते हैं। परिणामस्वरूप परिश्रमी अध्यापक जो अल्पसंख्यक होते हैं, किनारा करने के लिए मजबूर हो जाते हैं न तो प्रबन्धतंत्र और न ही ि ाक्षक साथी उनकी बात सुनने के इच्छुक होते हैं। यह एक अस्वस्थ्य प्रवृत्ति है। ि ाक्षक के गुण अध्यापक भौक्षणिक प्रक्रिया का एक प्रमुख उपयोगी, अनिवार्य हिस्सा है। ि ाक्षा जिसे त्रिमुखी प्रक्रिया कहा जाता है जिसमें ि ाक्षार्थी व पाठ्यक्रम बिना ि ाक्षक के अपूर्ण है। ि ाक्षक ऐसी कड़ी है जो पाठ्यक्रम के विभिन्न अंगों को अपने ज्ञान, आम व्यक्ति, व्यवहार, चिन्तन आदि के द्वारा छात्रों को सरलतम तरीके से उनकी आव यकतानुसार उनके विषय को नि ि चत रूप से तय करने की दृष्टि से जोड़ता है।

हुमॉयु कबीर6 के अनुसार, ''ि ाक्षा पद्धति

की कु ालता ि ाक्षकों की योग्यता पर निर्भर है अच्छे ि ाक्षक के अभाव में सवोत्तम ि ाक्षा पद्धति का ह्रास भी अव यंभावी है। अच्छे ि ाक्षकों द्वारा ि ाक्षा पद्धति के दोशों को भी अधिकां ातः दूर किया जा सकता है।'

'विद्यालय की प्रतिष्ठा तथा समाज के जीवन पर उसका प्रभाव निःसंदेह उन ि ाक्षकों पर निर्भर है जो कि उस विद्यालय से जुड़े हैं ि ाक्षक के इस महत्वपूर्ण पक्ष के कारण आव यक हो जाता है उसके आद ार्त्मक स्वरूप को जानने पहचानने के लिए उसके गुणों का अवलोकन किया जाए। आद ि ाक्षक मनुष्य निर्माता, राष्ट्र निर्माता, ि ाक्षा पद्धति की आधारि ाला समाज को गति प्रदान करने वाला सभी कुछ माना गया है। साधारणतः ि ाक्षक में बालकों को समझाने की भाक्ति उनके साथ उचित रूप से कार्य करने की क्षमता, ि ाक्षक योग्यता, काम करने की इच्छा ाक्ति और सहकारिता आदि गुणों का होना, आव यक होता है। ऐसे गुण प्रत्येक ि ाक्षक में नहीं होते और न ही ि ाक्षण प्रत्येक व्यक्ति का कार्य है। ि ाक्षण एक आध्यात्मिक प्रक्रिया है जिसमें मस्तिष्क से सम्बन्ध स्थापित किया जाता है।

रेमेन्ट 7 का विचार है कि ि ाक्षक की उन सभी बातों का त्याग कर देना चाहिए जो कि तत्वहीन हों। कारण कि समस्त छात्रों की दृष्टि उसकी ओर केन्द्रित रहती है। अतः प्रत्यक्ष–अप्रत्यक्ष रूप से ि ाक्षक अपने को छात्रों पर प्रभाव डालने से बचा नहींसकता। अतः जरूरी हो जाता है कि हमे ाा उच्च आद ार्ों एवं विचारों का मन, वचन व कर्म से व्यवहार में लायें जिनका छात्रों पर अच्छा प्रभाव पड़े।

टैगोर के अनुसार – ''वह दीपक क्या रो ानी दे सकता है जो स्वयं बुझा है।'' उसी प्रकार ि ाक्षक ज्वलन्त दीपक के समान होना चाहिए। इसी सम्बन्ध में के0पी0 सैपडीन का मत है – ''आप एक बर्तन में से कोई वस्तु तब तक उडेलकर निकाल सकते जब तक कि आपने वह वस्तु उसमें रखी न हो। यदि ि ाक्षक ज्ञान एवं बुद्धि की दृष्टि से हीन व़ खोखला है यदि उसमें ज्योति प्रदान करने वाली भाक्ति नहीं है तो वह अपने बालकों के मश्तिष्क का प्रखर या अपने छात्रों की भावनाओं को मानवीय रूप प्रदान नहीं कर सकता। यदि वह स्वयं जलता हुआ दीप नहीं है तो वह दूसरों में ज्ञान के प्रका ा को प्रसारित करने में सदैव असमर्थ रहेगा।''

भारत में प्राथमिक ि ाक्षा के सुधार के लिए किये गये प्रयत्न नाकाफी सिद्ध हुए हैं। निःसंन्देह प्राथमिक ि ाक्षा ही ि ाक्षा को सही निर्दे ान व आधार देकर दि ाा निर्धारण करती है। वर्तमान प्रतिदर्ष में वि व के परिपेक्ष्य में भारत की स्थिति अत्यन्त गौढसिद्ध हो रही है। इस पर न केवल नये भाोधों की आव यकता है अपितु भाोधों के निष्कर्षों को क्रियान्वित करना भी आव यक है। अन्यथा आयोग, समितियाँ, भाोध इत्यादि बिना क्रियान्वयन के निष्फल प्रमाणित होंगे।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. दुबे भयामाचरण – 'भारतीय समाज', ने ानल बुक ट्रस्ट आफ इंडिया, 2005, पृ0सं0 126
2. श्रीनिवास एम0एन0 – 'आधुनिक भारत में सामाजिक परिवर्तन', राजकमल प्रका ान, 1972, दिल्ली पृ0सं0 7
3. श्रीनिवास एम0एन0 – 'आधुनिक भारत में सामाजिक परिवर्तन', राजकमल प्रका ान, 1972, दिल्ली पृ0सं0 7
4. टैगोर रवीन्द्र नाथ – 'ि ाक्षा', पृ0सं0 24–25
5. रेमेन्ट – मोरल एण्ड रिलिजियस एजूके ान
6. कबीर हुमॉयू – एजूके ान इन न्यू इंडिया (लन्दन, 1956)
7. दैनिक जागरण – लेख

*****